मनुष्य बनो

अक्टूबर
१९६०

वा
२

प्रेरणा,

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्म

पालन,

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य २०.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदः पूर्णात्पूर्णमदुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

दीपावली मंगलमय हो

मनुष्य बनो

दीपावली अंक

वर्ष ४०	अक्टूबर १९९०	अङ्क १

शब्द

१ गुरु बिन भेद बताये कौन, गुरु बिन प्यार कराये कौन ?
२. गुरु बिन सुरत चढ़ाये कौन, गुरु बिन द्वार खुलाये कौन ?
३. गुरु बिन मन ठहराये कौन, गुरु बिन ध्यान जमाये कौन ?
४. गुरु बिन आँख उलटाये कौन, गुरुबिन नाद सुमाये कौन ?
५. गुरु बिन चक्र मुकाये कौन, गुरु बिन मौत जताये कौन ?
६. गुरु बिन दोन और दुखियों को, सीने से लगाये कौन ?
७. यह दुनियाँ दिन चार दिहाड़े, गुरु बिना समझाये कौन ?
८. अबके जिनको गुरु मिला ना, यम से उन्हें बचाये कौन ?
९. बिछुड़ गये कर्मों के मारे, 'गाफिल' उन्हें मिलाये कौन ?

—:•:—

मौज (ले० परमदयाल जी महाराज)

दर्द दिल रख कर के मजमून लिख रहा हूँ, अपने जैसों के लिये
लुट न जायें भोले भाले लिख रहा हूँ इसलिये ।
हुक्म है मुझको ऐसा, कर रहा हूँ काम जगत कल्याण का ।
और मुझको गरज कुछ नहीं, दर्द है इन्सानी नस्ल के लिये ॥

आज अलीगढ़ से एक व्यक्ति ने लिखा है कि कोई महापुरुष अपने आप को राधास्वामी दयाल का अवतार प्रगट करते हैं आदि । पढ़ा और आप ही हंसी भी आयी और खेद भी हुआ फिर दोनों दशाएं समाप्त हो गयीं ।

मैंने अपनी समस्त आयु सत्त कबीर गुरु नानक, राधास्वामी मत अथवा सन्तों के मार्ग में जो सब एक ही हैं, इसमें व्यतीत की । मैंने स्वयं सच्चा शिष्य और गुरू बनकर देख लिया और इस अनुभव के आधार पर साहसपूर्वक कहता हूँ कि हे संसार के भोले भाले जीवों कुछ होश करो । सन्त मत की वास्तविक शिक्षा को तो कोई देता नहीं है । यह सब काल और माया के स्वयं पुजारी हैं और दूसरों को अपनी उन्मत्ता अथवा निज स्वार्थ या डेरे धामों और आश्रमों के लिये अज्ञान और भ्रम में रखकर बात का बतंगढ़ बनाते हैं और अपना अपना क्षेत्र बना लेते हैं । भली भाँति चढ़ावा चढ़ता है और कुछ अज्ञानी जीव हिपनोटाइजर होकर उनके जाल में फंस जाते हैं ।

राधास्वामी मत, कबीर मत, अथवा संत मत की वास्तव में एक सच्ची स्वच्छ शिक्षा है जो जीव को सिध गति से मिला देती है और साथ ही इस जीवन की यात्रा को सुखमय, शान्त मय व्यतीत करने का रहस्य बताती है । इसके लिये पूर्ण पुरूष का सत्संग और साधन मुख्य है और बस । उस नोटिस में जो इस व्यक्ति ने मुझको भेजा है लिखा है कि राधास्वामी दयाल

का अवतर शाही चोले में आ गया है। मैं कहता हूँ।

राधास्वामी क्या है ? सुरत का अकाल पद अनाम पद से प्रकट होकर इंद्री घाट तथा एड़ी से चोटी तक आकर फिर वापिस अपने देश में लौट जाने के समस्त खेल का नाम राधा-स्वामी है। इसको सार वचन पोथी को नाम माला स्पष्ट वर्णन करती है।

मैं जो इसका अर्थ समझता हूँ वह यह है कि अब शासन में सत मत की शिक्षा आयेगी। शिक्षा यह है कि सुरत प्रत्येक अवस्था में अडोल अचिन्त, नर्भय और निरवैर रहे। यह तभी हो सकता है कि शासन वाले स्वयं इस अवस्था में रहने वाले हों। अपने कार्य शासन से दूसरों को निडर भय और अचिन्त रख सकें।

मुझे यह नोटिस पढ़कर हंसी भी आई वह इसलिये कि बात कुछ है और यह महात्माजन कहते कुछ हैं क्योंकि मैंने गुरु बन कर देख लिया कि जो कुछ किसी को मिलता है वह उसके अपने ही विश्वास और श्रद्धा का फल है। वास्तव में मानव को देने वाला उसकी रक्षा करने वाला उसका अपना ही मन है। स्वामी जो महाराज ने माया सम्वाद में स्पष्ट वर्णन किया है।

काल ने रक्षक कला दिखाई। काल ने अपनी पूजा आप करायी। यह काल मानव का मन है। सन्त मत की शिक्षा चौथे पद की है। खेद इस कारण हुआ कि संत साधु की महिमा अगम अपार है। सन्त वो है जो केवल शब्द और प्रकाश में रहता है। साधु वो है जिसका मन अपने नियन्त्रण में है किन्तु यहाँ यह महात्माजन मन के चक्र के अतिरिक्त जिसमें दूसरे फंसते रहें और कोई बात नहीं करते।

दोनों विचारों को त्याग दिया क्यों ? इसलिये जब सन्त कबीर अथवा राधास्वामी दयाल कह गये कि :—

"इस काल ने सब जग खाया, सत्गुरु देख डरी।
काल ने जग भरमाया मैं कासे कहूँ बखान।।
जब ऐसा होता ही रहता है तो मुझे क्या ? होता रहे।
हम सुखी हैं निबन्ध हैं राधास्वामी नाम से।
तर गये संसार से और काम अपना कर चले।।

चूंकि एक कृतज्ञता थी राधास्वामी मत को और गुरु आज्ञा थी इसलिये भोले भाले भक्तों को कहता हूँ दीवानो क्यों त्रुटिपूर्ण गुरुत्व में लुटे जाते हो सचाई को समझो और बस। इन महात्माओं को कहता हूँ स्वामी जी की यह कड़ी स्मरण रखना।

गुरुजी गुन्हेगार अति भारी।
नर नारीबहुते बस कीने भोले भक्तन धोख दिया री।

मैंने अपने सत्संगों में भली प्रकार इन बातों की व्याख्या कर दी है। कैसे आश्चर्य की बात है कि यदि राधास्वामी दयाल को दूसरे चोले में आना था तो उनकी अपनी मुक्ति नहीं हुई।

यह जग ठग है ठगनी माया।
कैसा प्रपंच पाखंड रचाया।
मान प्रतिष्ठा रुपया कमाया।
जीव अज्ञानी धोखा खाया।

दयाल नन्दू भाई जी महाराज का उपदेश।

आये हैं बहरे जहाँ में पूर्ण होने के लिये,
पूरण पहल से हैं मुन्शी, बहम खोने के लिये।
मिल गया गुरु का सहारा, ज्ञान का परिचय मिला।
सौंपी खिदमत सतगुरु ने मैल धोने के लिये।
शिव गुरु के रूप हैं, कल्याणकारी है सदा।

(—शेष पृष्ठ २६ पर)

।। मनुष्य बनो ।।

[गत माह सितम्बर से आगे राधास्वामी योग]

कर अपना काम किया है। वह जाग्रत पुरुष हर समय उसकी संभाल में स्वयं ही लगा रहता है। हमारी शक्ति ही क्या है जो हम उसके और उसकी दुनियाँ के सहायक होने का दावा करें। क्या वह स्वयं अपने काम के लिये आप पर्याप्त नहीं है।

हम किसी साधु को एक रोटी देकर समझते हैं कि इस साधु को हमारा कृतज्ञ होना चाहिए और सोचते हैं कि यदि हम उसे टुकड़ा न देते तो वह भूखा रह जाता। "ऐ मूर्ख मनुष्य, इस मूर्खता का भी कहीं ठिकाना है, सृष्टि के प्राणियों को जीविका तू देता है या वे देता है अर्थात् मनुष्य देता है या ईश्वर देता है, तेरी शक्ति ही कितनी है जो इस प्रकार व्यर्थ अभिमान करता है।" क्या यह ठीक नहीं है कि तू उन दरिद्रों को सहायता देकर अपनी उदारता, विशाल दृष्टि, उपकार के भाव की वृद्धि करता हुआ अपना आप सुधार कर ले। तू किस किसको देगा और किस किस का उपकार करेगा, ये तेरी शक्ति के बाहर है। उस साधु या फकीर का कृतज्ञ हो जो तेरे द्वार पर भीख माँगने आता है। वह आप ईश्वर का रूप है और तेरे ही उपकार के लिये तेरे ही द्वार पर आकर खटखटाता है। जो करते बने कर ले बहती हुई गंगा में हाथ धोना हो तो धो ले। व्यर्थ अहंकार क्यों करता है? इस साधु के आने में तेरी ही भलाई की मसलहत छिपी हुई हैं और तू अकड़ू बनकर डींग मारता है। दान करने से तेरा भला होगा। साधु तेरे पाप को धोता हैं। तू क्या करता है? तुझसे हो क्या सकता है? इनके आने को अपना सौभाग्य समझ और उनसे लाभ उठा ले।

देय देय कुछ देय तू, जब लग तेरी देह।
निश्चय कर उपकार ही, जीवन का फल येह।।
देय देय कछु देय तू, जब लग तेरी देह।
देह खेह हो जायेगी, फिर कौन कहेगा देह।।

॥ मनुष्य बनो ॥

धन दिये धन ना घटे, नदी न घटे नीर।
अपनी आँखों देख ले, यों कथ कहें कबीर॥

गाँठि होय सो हाथ ले, हाथ होय सो देह।
आगे हाट न बानिया, लेना है सो लेह॥

देह धरे का गुन यही, देय देय कछु देय।
कहें कबीरा देय तू, जब लग तेरी देह॥

यह सच्चा दान है।

आदमी को बाल बच्चे इसलिये नहीं मिले हैं कि वह इन्हें गले का हार बनाकर रक्खे, किन्तु इसलिये कि मौज के आधीन रहकर उनके साथ प्रेम भाव का बर्ताव करे ताकि उसमें प्रेम भक्ति का अंकुर जमे। तूने कैसे समझ लिया कि यह तेरे लड़के हैं। यह तो सत्पुरुष राधास्वामी के बाल बच्चे हैं और केवल तेरे ही उपकार की दृष्टि से तुझे दिये गये हैं। तू अपना काम नहीं बनाता। व्यर्थ झंझटों में फंसकर अहंकारी होता है। मृत्यु आती है और बच्चे छिन जाते हैं। तेरे होते तो तेरे पास ही क्यों न रहते। जरा उनको मृत्यु के पंजे से रोक तो ले। तब हम जानें। समय को मूल्यवान समझ। धाय की भाँति उनका पालन पोषण कर। उनके साथ प्रेम का बर्ताव करता हुआ प्रेम की पूंजी को जितना जी चाहे बढ़ा ले। जब वह छिन जायें तो सन्तोष के साथ मालिक को धन्यवाद दे। वह इतने ही समय के लिये तुझे दिये गये थे। अधिक लालसा न कर, वरना व्यर्थ परेशान होगा। इसी प्रकार और दुनियावी पदार्थों के सम्बन्ध में सोच लो।

यह मौज के आधीन रहने की फिलोसफी है।

इकसठवाँ वचन

लालची मनुष्य

लालची मनुष्य सदा दुखी रहता है। लोभ और लालच का स्वभाव उसे विशाल हृदय वाला नहीं बनने देता। बिना विशाल हृदय हुए उसके भाव उच्चता की ओर नहीं जाते और वह नीच विचार और ओछी प्रकृति का बन जाता है।

ग्रामीणों की एक कहानी है और कथा बड़ी मनोरंजक है जिससे लालची मनुष्य की दशा के अनुमान लगाने में सुगमता होती है। कहानी तो कहानी ही है। कल्पित, मिथ्या और मन गढन्त है किन्तु उससे शिक्षा नहीं मिलती हैं। कथा यह है—

"जब ब्रह्मा ने इस जगत को रचा, मनुष्य, बैल, कुत्ता, बिल्ली, उल्लू और बन्दर की आयु चालीस-चालीस वर्ष नियत की। उनसे कहा कि चालीस वर्ष जीवित रहकर मेरे पास आओ।"

बैल, कुत्ता, बिल्ली, उल्लू और बन्दर ने पूछा कि हमारे लिये काम क्या है? ब्रह्मा बोले—"बैल हल जोते, कुत्ता घरों की चौकीदारी करे, बिल्ली म्याऊँ म्याऊँ करती हुई झूठा खाय और उल्लू मूर्ख बना रहे। दिन दोपहर भी उसे कुछ न दिखाई दे। बन्दर चौ हत्था बना हुआ नीचे कूदे मुंह बनाये।"

यह जानवर बड़े घबराये 'भगवान! जीवन वैसे ही बन्धन की अवस्था है शरीर रूपी जंजीर आपत्तिकारक है। जन्म लेना महा पाप है। शत्रु की भी ऐसी दशा न हो। लोग जन्म लेते ही रोते आते हैं और आयु पर्यन्त रोते झींकते हैं। इस पर ४० वर्ष की अवधि नियत की है।

दुष्ट स्वभाव, दुष्कल्पनाशील और दुष्कर्मी होते हैं, इसलिये दुष्टता का प्रारम्भ हो गया :

४० वर्ष तो ज्यों त्यों खुशी से कट गये। बैल के शेष बीस वर्षों में बैल हो बना हुआ वह रात-दिन काम में लगा रहता है। सन्तान का तो क्या कहा जाय, तमाम दुनियाँ का भार अपने सिर पर रख लेता है। साठ वर्ष तक उसकी यह दशा रहती है। साठ वर्ष के पश्चात कुत्ते के बीस वर्ष में इतना अपमानित, तुच्छ और निकम्मा रहता है कि आत्म सम्मान को तिलाँजलि दे बैठता है।

अपने संगी साथियों से लड़ना भिड़ना, काटना, मारना इसका काम होता है। दूसरों की भलाई नहीं देख सकता और अपने स्वार्थ के सामान को चौकीदारी बड़ी चौकसी से करता है केवल अपना ही भला चाहता है और अपने ही पेट की खैर मनाता है। अस्सी वर्ष तक उसकी यह दशा रहती है। फिर अस्सी वर्ष से १०० वर्ष तक वह बिल्ली के बीस वर्ष का अधिकारी होकर भोगो बिल्ली बन जाता है। दया के योग्यडरपोक कायर ! और छल कपट उसके व्यवहार में आ जाता है। चालाकी और चतुराई की सूझती है। जो काम करता है वह चालाकी और कपट से भरा होता है। फिर १२० वर्ष तक उल्लू की तरह आंख का अन्धा बना हुआ अंधेरे में शिकार मारता हैं और शेष बीस वर्ष जो बन्दर की आयु के हैं उनमें पोपला बन कर मुंह बनाता हैं कमर टेढ़ी हो जाती है और चार पाँवों से चलता है। १४० वर्ष तक उसकी यह दशा रहती है और तब निराश्रयता और पराधीनता की मृत्यु मरता हैं।

यह सब बातें मनुष्य की संतति में अब तक मौजूद हैं। ऐसे आदमी को क्या कहा जात ? क्या वह राक्षस, हिंसक और दुनियाँ को लज्जित करने वाला नहीं।

'जीवन आनन्द से व्यतीत होना चाहिए न कि दुख के साथ,' और जब यह दशा हो तो फिर भगवान के भरोसे और शरणागति का जीवन क्यों न धारण किया जाय।

०—

बासठवाँ वचन

शरणागत और मौज पर निर्भर रहने की व्याख्या

जो होने को हैं वही होता हैं और वहा होगा। जिस नियामक ने पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा तारागणों को उत्पन्न किया है, उसने उनकी विशेष चाल नियत की है। उसी चाल के अनुसार जड़ और चेतन सृष्टि के काम हुआ करते हैं। इसमें तनिक भी परिवर्तन नहीं होता। जो कुछ किया गया है सोच समझ के साथ किया गया हैं, हाँ अपनी अल्प बुद्धि के कारण उसे हम नहीं समझ सकते, लेकिन हमारे न समझने से उसकी दशा में अन्तर नहीं आता। इस बात का समझना कठिन है। मनुष्य इतनी आपत्तियाँ उठायेगा कि उससे जान छुड़ाना कठिन होगा होगा। कोई कहेगा कि यदि यह दशा है तो हमारा करना धरना सब व्यर्थ है। कोई बहस करेगा कि यदि प्रारब्ध का लिखा ठीक है तो फिर पुरुषार्थ क्या वस्तु है, लेकिन वास्तविक बात तो यों है कि जिसे पुरुषार्थ कहा जाता है वह भी प्रारब्ध के ही अन्तरगत है।

गुरु की निष्ठा को समझकर अपने आपको हर प्रकार से

---

(१) तुलसी मन मैदान में तान पिछौरा सोय।
अन होनी होनी नहीं, होनी होय सो होय॥
होइ है वही जो राम रचि राखा, को करि तर्क बढ़ावे शाखा।
चाहे कीन करावे सोई, यह गति उमा जान कोई कोई॥

उसका सेवक बना देने से स्वयं ही इस प्रकार के भाव मन में उत्पन्न हो जाते हैं जो विश्वास की परिपक्वता के साथ मौज पर आरूढ़ रहने की योग्यता प्रदान करते हैं। इस मौज पर सन्तुष्ट और दृढ़ रहने से हानि नहीं होती ओर न मनुष्य आलसी बन जाता है बल्कि उसमें धैर्य (धृति) आ जाता है और निर्भयता और निर्द्वन्यता से आने वाली परिस्थितियों को सहन करने के योग्य बना रहता है। उसके कारण से हृदय की व्याकुलता दूर रहती है जो स्वयं ही बहुत बड़ी कृपा की वस्तु है। यह शरणागत होने और मौज या भगवत इच्छा पर निर्भर रहने की व्याख्या है।

:०—:०

तिरसठवाँ वचन

निष्ठा

निष्ठा कहते हैं इष्ट पर दृढ़ता या विश्वास के साथ स्थित होकर रहना। हिन्दुओं में एक दो नहीं अनेक प्रकार की निष्ठायें हैं। ध्यान की निष्ठा है, निष्ठा से विशेष प्रकार का दृष्टिकोण बन जाता है। यह दृष्टिकोण वैसे ही दृश्य सामने लाता रहता है जिसका हृदय में पक्का ध्यान और दृढ़ विश्वास है।

लड़की पति के घर विवाह होकर आती है। वह पति और पत्नी की निष्ठा को हृदय में धारण करती है। पति को उसने प्रेम का केन्द्र बना लिया। उस पर सबसे अधिक प्रेम रखती में और उसे पति के ऊपर विशेष प्रकार का सत्व प्राप्त हो जाता है। वह पतिव्रत धर्म पर दृढ़ होकर स्वयं ही तपस्या की मूर्ति बन जाती है और आनन्द और शान्ति की अधिकारिणी

होती है यह पति की निष्ठा धारण करने का एक ढंग है। असली प्रेम तो उसे पति से ही है मगर इसका यह अर्थ नहीं है कि वह दूसरे घरवालों से घृणा करे। जिसने प्रेम का दृढ़ केन्द्र अपने हृदय में बना लिया घृणा उससे कोसों दूर रहती है प्रेम तो वह पति से ही करती है परन्तु पति के प्रेम के सम्बन्ध से घर के अन्य पुरुष स्त्री भी उसके प्रेम का लाभ उठाते हैं पति का प्रेम तो वृक्ष की जड़ है दूसरों का प्रेम शाखायें, टहनी और पत्ते हैं। जड़ को पानी देने से सबको पानी पहुंचता है। पत्ते पत्ते के सींचने से वह परिणाम नहीं होता। यदि कोई स्त्री विवाह के पश्चात घर के सब लोगों से तो प्रेम करे मगर पति की ओर से बेपरवाह रहे तो उसे प्रेम का आनन्द नहीं मिलता हृदय में दुविधा द्वचिताई बनी रहती है, लेकिन जो केवल अपने पति को प्यार करने वाली स्त्री कुरूप, मैली कुचैली और कुढंगी भी हो फिर भी उसका स्थान अन्य स्त्रियों से ऊंचा रहता है और शान्त की मूर्ति बनी रहती है। ऐसी स्त्री के देह पर चाहे फटे पुराने चिथड़े हो लिपटे हों फिर भी पतिव्रत धर्म उसे इस प्रकार की विशेष सुन्दरता प्रदान करता है जो अन्य स्त्रियों के हिस्से में नहीं आती। इस प्रकृति की स्त्री भूलकर भी अपने पति की बुराई नहीं करती और पति को देख देख कर मन में मस्त बनी रहती है।

इसके विपरीत अन्य स्त्री को देखो। उसने पति के सच्चे भाव को मन में स्थान नहीं दिया। पति को उसने साधारण मनुष्य समझ लिया और अन्यों से प्रेम किया। सम्भव है कि वह अच्छे घर में रहती हो, सुन्दर हो, सिर से पाँव तक आभूषणों से लदी हो परन्तु वह पति के सुख से वंचित रहती है। हृदय में शान्ति क्षण मात्र को भी नहीं आती। लाख आदमी

उसकी सुन्दरता, आभूषणों और वस्त्रों की प्रशंसा करें मगर क्या किसी के हृदय में इसके मान-सम्मान को स्थान मिलता है। वह शारीरिक और मानसिक दृष्टि से सुन्दर चित्र की तरह है किन्तु अध्यात्म से वह सर्वथा वंचित है।

केवल इन्द्रिय लोलुप पुरुष ही उसकी ओर आकर्षित होते हैं वह बिगड़ते बिगड़ते इतनी बिगड जाती है कि किसी एक पुरुष के हृदय में उसके लिये स्थान नहीं रहता। वह स्वयं इस बात को जानती है। घर की पतिव्रता स्त्री से ईर्ष्या भी करती है, किन्तु यह मान और सौन्दर्य खोती हुई ईस योग्य भी नहीं है कि वह पतिव्रता स्त्री के पाँव को हाथ लगा सके। उस को जीवन भर शान्ति प्राप्त नहीं होती और अन्त में कुत्ते की मृत्यु मरती है।

यह पतिव्रता की निष्ठा है। निष्ठा, सन्तोष, मौज और शरणागति का पन्थ है। इसी प्रकार और भी अगणित निष्ठायें हैं। गुरु को गुरु की दृष्टि मन का अर्पण करना निष्ठा है। जो गुण पतिव्रता सती स्त्री में होता है वही साधु, सन्त और सूरमा में रहता है। साधु, सती और सूरमा तीनों ही एक, विचार-धारा और एक ही श्रद्धा के मनुष्य हैं। यद्यपि इनकी सूरत अलग-अलग हैं।

कबीर साहब की वाणी है :—

साध सती और सूरमा, इनका मता अगाध।
आसा छोड़ें देह की, तिनमें अधिका साध ।।
सूरे के तो सिर नहीं, दाता के धन नाहिं।
पतिव्रता के तन नहीं, सुरत बसे पिऊ माहिं ।।
सूरे के तो कोटि सिर, दाता के धन वीस।
पतिव्रता के तन सभी, पति राखे जगदीश ।।

—×—

चौसठवां वचन

एक की भक्ति

इसी निष्ठा का नाम एक की भक्ति है। एक की भक्ति में प्रारम्भ से एक की पूजा रहती है और अन्त तक वह इसी एक आधार पर स्थित रहती है। एक का पुजारी दो तीन चार का पुजारी नहीं होता। एक की भक्ति ही पतिव्रता का ऐश्वर्य है। और दो चार की भक्ति व्यभिचारिणी का लक्षण हैं। एक को एक मान लेना एक की भक्ति है।

एक को छोड़कर दूसरे से सम्बन्ध पैदा करना व्यभिचार है। इसी कारण से इस योगसाधन के प्रारम्भ में कह दिया गया है कि -"गुरु कीजिये जान और पानी पीजिये छान।" ताकि फिर उसे दुबारा किसी और से अध्यात्म के संस्कार ग्रहण करने की आवश्यकता न रहे।

जो कुछ करना धरना हो प्रारम्भ में ही सोच समझ कर करो वरना दुबारा यदि किसी से सम्बन्ध पैदा करते हो तो लाँछित हो जाओगे।

जो स्त्री किसी एक पुरुष को छोड़कर दूसरे से सम्बन्ध जोड़ती है, वह व्यभिचारिणी हो जाती है। सती नहीं हो सकती और न पतिव्रत धर्म में सच्ची उतरती है। जो गुरु में निष्ठा रखने वाला है वह अपने एकत्व स्थिति के संस्कार को भ्रष्ट कर लेता है। वह सम्भव है कुछ अध्यात्मिक उन्नति कर जाय लेकिन उसे गुरु मुख कहना अनुचित होगा। गुरुमुख तो वह है जिसने गुरु को मुख्य करके जान लिया। मुख्य तो एक ही होता है। दूसरे मालिक के पास जाने से उसके प्राण निछावर करने के महत्व में धब्बा आता है।

जिसका पल्ला पकड़ा, उसका पकड़ा अर्थात जि की शरण एक बार ले ली, उसी में रहना चाहिए। दूसरे का पल्ला क्यों पकड़ा जाय।"

यह सच्ची और खरी बातें हैं जो हृदय को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकती।

पतिव्रता का पति मर गया। वह उसी के नाम पर सती हो जाती है। दूसरे से सम्बन्ध नहीं जोड़ती। साधु का गुरु चोला छोड़ देता है। वह भी कमाई करता हुआ गुरु में लीन रहता है। पति या गुरु देह को नहीं कहते। यह आदर्श और आईडियल है जिनका केवल एक जात खास (विशेष व्यक्ति)के आसरे अनुसरण किया जाता है। मन तो एक है उसमें जिसका ध्यान बध गया, बध गया। अब एक के ध्यान को निकालकर दूसरे का ध्यान उसमें किस प्रकार भरा जा सकेगा ? क्या दो के ध्यान से दुचिताई न आयेगी और मनुष्य द्वविधा का शिकार न होगा। संस्कार और प्रभावों को वह कहाँ ले जायेगा ? यह तो हृदय में स्थान पा गये।

सिंह गमन, सत्पुरुष वचन, कदली फले एक बार।
त्रिया, तेल, हमीर हठ, चढ़े न दूजी बार।।

अर्थ—शेर की चाल एक सी होती है। सच्चे पुरुषो के वचन में एकता रहती है। केले के वृक्ष में एक ही फल आते हैं ऊंचे कुल की स्त्री एक ही बार ब्याही जाती है। राणा हमीर का हठ एक ही तरह स्थिर रहता है। इनमें से किसी एक में परिवर्तन नहीं होता।

उच्च विचार वाला, गुरु में निष्ठा रखने वाला बार बार गुरु को नहीं बदलता। यह तो उनका काम है जिनमें गम्भीरता नहीं होती और एक इष्ट पर स्थाई नहीं रहता।

हाँ, यदि गुरु झूठा, मक्कार और अध्यात्मिक गुणों से रहित है तब तो उसके त्यागने ही में भलाई हैं क्योंकि गुरु होने के गुण न होने के कारण से अभी तक सच्चे अर्थों में गुरु धारण भी नहीं किया गया यदि किसी सच्चे को गुरु धारण कर लिया तो उसका त्याग करना क्या है। और हो सकता है। वह तो तमाम हृदय और मस्तिष्क में प्रवेश कर गया है। उसके ध्यान और प्रभाव को कहाँ-कहाँ से हटाया जायेगा। क्या जीवन इसी काम के लिये ही दिया गया है। उलट-फेर करने से क्या लाभ होगा।

झूठे गुरु की पक्ष को, तजत न कीजे बार।
द्वार न पावे शब्द का, भटके बारम्बार ।।
साँचे गुरु की पक्ष में, मन को दे ठहराय।
चंचल से निश्चय भया, कहुं नहिं आवे जाय ।।

—×—

पैंसठवां वचन

एक गुरु

गुरु एक होता है। मालिक एक होता है। एक चेला दो गुरु की भक्ति नहीं कर सकता और न एक नौकर दो मालिकों की सेवा कर सकता है। यहाँ जो है वह एक हो एक है जिसका सम्बन्ध एक से है वह आनन्द में रहता है और जिसका सम्बन्ध दो से है उसकी दशा भिन्न रहती है। यह जीवन के व्यवहार के अनुभव की बातें हैं। यदि ये बातें इस लोक और दुनियावी मामलों में इतनी सच्ची हैं तो परलोक और धार्मिक व्यवहार में भी सच्ची हैं। इष्ट जब होगा एक ही होगा। दो इष्ट कभी नहीं होने चाहिए अन्यथा वह इष्ट नहीं कहलायेंगे।

तुम संतों के सत्संग का लाभ उठाओ। जहां कहीं अच्छी बातें मिलें उनको सीखो, जानकारी को बढ़ाओ। लेकिन यह सब काम एक गुरु के आधीन किये जायें, तब तो उनका लाभ होगा अन्यथा वह दुचिताई और बेचैनी उत्पन्न करेंगे और लाभ के बजाय हानि होगी।

—×—

छयासठवां वचन

समय का सन्त सत्गुरु

आदेश है कि जब सन्त सत्गुरु प्रकट हों उनका सहारा लेने में चूकना न चाहिए और समय के सन्त सत्गुरु की सहायता अवश्य प्राप्त कर लेनी चाहिए। यह अध्यात्म के प्राप्त करने का सच्चा मार्ग है। लेकिन ऐसे लोग दुनियाँ में बहुत कम हैं जो समय के सन्त सतगुरु के अभिप्राय को समझते हों। वरना अधिकतर आदमी भेड़ धसान चाल से चलते हुए इधर के मारे उधर भटकते हैं।

समय के सन्त सत्गुरु का प्राकट्य दुनियाँ में विशेष विशेष सवसरों पर होता है जब पृथ्वी और आकाश वर्षों घूमते हैं और जब जब अध्यात्मिक व्यवहार को हानि पहुंचने का भय रहता है तब तब यह प्रकट होकर उसका सुधार कर देते हैं। विष्णु का अवतार प्रतिदिन नहीं होता। बुद्ध प्रति दिन प्रगट नहीं होते और न तीर्थंकर सर्वथा प्रगट होते हैं। इसी प्रकार सन्त सत्गुरु के सम्बन्ध को भी याही समझना चाहिए।

यह बहुत बड़ी आवश्यकता के समय आते हैं और उनका आना प्राकृतिक नियम के अनुसार होता है। इनमें विलक्षणता

होती है। यह विचित्र पुरुष होते हैं और इनमें से हर एक किसी न किसी प्रबल शक्ति का अवतार कहलाता है।

अवतार कहते हैं उतरने को। जिस समय यह ब्रह्माण्ड अपने सब सूर्यादि ग्रहों और तारागृहों सहित किसी विशेष ऊंचे रूहानी (अध्यात्मिक) सूर्य के सन्मुख आता है तब उस ऊंचे दर्जे के सूर्य का भारी प्रभाव किसी (पार्थविक) शरीर के अन्दर प्रवेश करके समय पर उस दुनियाँ में उत्पन्न होता है उसकी चाल सबसे निराली होती है। उसका स्वभाव विचित्र ढंग पर असाधारण दिखाई देता है। वह अन्य साधारण मनुष्य की तरह नहीं होता, यद्यपि उसकी आकृति (रूप रंग) मनुष्यों ही की सी होती है। बुद्धि, शक्ति, वीरता आदि की दृष्टि से भी प्रायः लोग इस दुनियाँ में ऐसे प्रकट होते है जो केवल बाह्य आकृति में मिलते जुलते हैं लेकिन उनकी बुद्धि, योग्यता वीरता पूर्णरूपेण विशेष ढंग की होती है।

इसकी व्याख्या होना आवश्यक है क्योंकि जब तक यह विषय स्पष्ट न कर दिया जायेगा तब तक सचाई का समझ में आना कठिन हैं।

पृथ्वी चक्कर करती है। चक्कर करते करते जब यह ब्रह्माण्ड के वृहस्पति मण्डल के सम्मुख आ जाती है तब वृहस्पति की छाया और प्रभाव का प्राणी पृथ्वी पर जन्म लेता है वह पूर्ण बुद्धिमान और पूर्ण दानी होता हैं और दुनियाँ में अद्वितीय होता है यह वृहस्पति का अवतार है। जब पृथ्वी मंगल के सम्मुख आती है, तब इसी नियम के आधीन किसी प्रबल शक्तिवान का जन्म होता है ओर वह बड़ा प्रयत्नशील और बलवान होता है। यह मंगल का अवतार है। जब पृथ्वी शुक्र के सामने आती है तब वीर्य्य वाले महान पुरुष का जन्म होता है और वह शुक्र का अवतार कहलाता है और इसी

प्रकार समझ लो । यह इसी पृथ्वी के ब्रह्माण्ड के तारागणों की बातचीत हैं । चन्द्रग्रहण अथवा सूर्यग्रहण के समय हिन्दू घर की स्त्रियों को चौकन्ना कर देते हैं कि ग्रहण के समय सावधान होकर रहें । मालिक के नाम का सुमिरन करें । ऐसा न हो कि ग्रहण के दूषित प्रभाव का बच्चा उत्पन्न हो जाय यदि सावधानी नहीं की जाती तो प्रायः होठ कटे बच्चे पैदा हो जाते हैं । यह साधारण और प्रसिद्ध बात है और अपनी विशेषता की दृष्टि से किसी अंश तक शिक्षाप्रद है ।

जिस प्रकार इस सूर्य मण्डल के तारे जन्म लेने वाले जीवों पर प्रभाव डालकर कभी कभी विचित्र प्राणियों को पैदा करते हैं, उसी प्रकार जब चक्कर करने वाली पृथ्वी के सम्मुख दूसरे ब्रह्माण्ड आ जाते हैं तो उन जैसे प्राणी पृथ्वी पर पैदा हो जाते हैं ।

मूर्ख लोग इसको प्रकृति की भूल चूक समझते हैं यद्यपि इसमें विशेष प्रकार के तारागणों की सूरतों की छाया और प्रभाव रहता है । किसी के यहाँ कई सिर वाले बच्चे पैदा हो जाते हैं जो वास्तव में विराट पुरुष की प्रतिबिम्बित दशा का परिणाम है । विराट पुरुष स्वयं एक सूर्य है जो सहस्रों सिर वाला, सहस्रों नेत्रों वाला कहा जाता है और इसी प्रकार जो जुड़े हुए लड़का लड़की की शक्ल वाले बच्चे उत्पन्न हो जाते हैं तो वह भी जुड़े हुए तारागणों के कारण से हैं जो जुड़े हुए कहलाते हैं । और इसी प्रकार समझ लो ।

सूर्य एक ही तो नहीं है । अगणित सूर्य हैं । वह अपने प्रभाव से भी कभी विचित्र सामान के प्राकट्य में आने का कारण होते हैं । इनके रहस्यों का भेद हिन्दू-स्त्रियों के रस्मी बर्तन में छिपा रहता है, जिसे सुनकर सोच विचार और समझ लेना चाहिए । इस पर अधिक क्यों लिखा जाय ।

कभी-कभी पहाड़ों के वर्फीले मण्डल में वर्फ के नीचे ऐसे विचित्र जीवों की ठठरियाँ पाई जाती हैं जो दुनियाँ के जीवों की सूरतों से भिन्न होती हैं। विद्वान लोग या तो उन्हें प्रकृति की गलती का परिणाम बताते हैं या यह कहते हैं कि इस नस्ल के प्राणी दुनियाँ में पहले मौजूद थे। अब इसकी नस्ल नष्ट हो गई। यह बात नहीं है, किन्तु वास्तव में उसके पर्दे में यह सिद्धान्त छपा हुआ है जिस पर हमने ऊपर की पंक्तियों में कुछ अंशों में प्रकाश डाला है।

यह सूर्य एक है। इससे ऊंचा विराट पुरुष स्वयं दूसरा सूर्य है जो सृष्टि का उत्पन्न करने वाला कहलाता है और ईश्वर का स्थूल रूप है और जिसकी वेद और उपनिषदों में स्तुति गाई गई हैं। इसके अतिरिक्त तीसरा सूर्य और है जो ब्रह्म कहलाता है और उसका नाम अव्याकृत है। चौथा सूर्य हिरण्यगर्भ है जो उससे भी ऊंचा हैं और सुवर्ण के अन्डे की शक्ल में चमकता रहता है और इसी प्रकार समझ लो।

जो पुरुष विशेष प्रकार का विवेक लेकर ब्रह्म से उत्पन्न होता है वह ब्रह्म का अवतार कहलाता है। जो विष्णु से पैदा होता हैं वह विष्णु का और जो शिव से पैदा होता है शिव का और जो ब्रह्म का विशेष प्रतिबिम्ब और प्रभाव लेकर उत्पन्न होता है वह ब्रह्म का अवतार कहलाता है। उसके व्यवहार बिल्कुल उसी प्रकार के होते हैं जैसे उसके असल के होते हैं। यह अवतार की फिलोसफी है। दुनियावी व्यवहार की दृष्टि से विष्णु के अवतार की सबसे अधिक विशेषता है क्योंकि पालन पोषण के नियमों में दत्तचित्त होकर वह रोचक और भयानक कार्यों से धर्म का सुधार करता है। दूसरे अवतारों को लोगों ने उतना महत्व नहीं दिया ठीक इसी प्रकार शक्तियों के भी अवतार हुआ करते हैं। शक्ति को लेकर जो स्त्रियाँ प्रगट

होती हैं वे उन्हीं का अवतार कहलाने का अधिकार रखती हैं।

साधारणतया जो सन्तान होती हैं वह मनुष्यों या पशुओं के जोड़ों की सन्तान होती हैं। विशेष नक्षत्रों का प्रभाव तो उनमें भी होता है मगर साधारणतया उनको महत्व नहीं दिया जाता और न किसी विशेष महत्व के पात्र होते हैं। महत्व तो उन्हीं को दिया जाता है जिनमें कोई विशेषता होती है।

अवतार का सिद्धान्त गलत नहीं है। हाँ, इसका रहस्य समझ में न आवे यह दूसरी बात है। इस पर सोच विचार कर ने वाले और सोच विचार कर उसका परिणाम निकालने वाले मनुष्य ओड़े होते हैं।

यहाँ एक बात और कही जाती है। उसके विषय में यहाँ कुछ न कुछ कह देना चाहिये। वह यह है कि जब इस पृथ्वी पर भाँति-भाँति की आपत्तियाँ और तरह तरह की विपत्तियाँ आने लगती हैं, मानवीय भावनाओं की सामूहिक धार आकाश मण्डल पर चढ़कर पृथ्वी के अनुकूल चक्र के समय किसी विशेष केन्द्र को छूती हैं तब समय की आवश्यकताओं और मसलहत के अनुसार उन्हीं भावनाओं की धार के सहारे जो व्यक्ति यहाँ खिचकर आ जाता है, अवतार कहलाता है। और चूंकि उस विशेष समय के मनुष्यों के साहस, अभिलाषाओं और इच्छाओं के सब सामान उस अवतारी पुरूष की गति, स्थिति, व्यवहार और स्वभाव में विद्यमान होते हैं। यह मानव उस पुरूष के वरूप में अपने मानसिक इष्टों की ज्यों की त्यों सूरत देखकर स्वयं समानता और समता के नियमानुसार उसको अपने आकर्षण और प्रेम का केन्द्र बना लेते हैं। फिर दुनियाँ में एक विशेष प्रकार का परिवर्तन हो जाता है। तब

सुधार और उन्नति का काम करके यहाँ से कूच कर जाता हैं अवतारों की पूजा की जड़ इस सिद्धान्त में है।

बहुत से शास्त्रकारों का यह अनुभव है कि अवतारों का शरीर स्थूल पंच महाभौतिक नहीं होता। यह सच भी है।

लेकिन शरीर की बनावट तो स्थूल भूतों से ही होती है। हाँ, यह अन्तर है कि उसका शरीर मनुष्यों के सूक्ष्म मानसिक तत्व से बनता है जो सामूहिक रूप से इनके हृदयों से निकल कर ऊपर के मण्डलों के विशेष शक्ति वाले केन्द्र को छूकर उस उच्च मण्डल के प्राणियों को यहाँ से प्रकट होने का अवसर देते हैं। इस दृष्टि से उसका शरीर साधारण माद्दे का नहीं कहलाता।

यह सब ध्यान देने और सोच विचार करने के विषय हैं। यों ही छोड़ देने योग्य नहीं हैं।

जिस प्रकार विष्णु का अवतार होता हैं उसी तरह दुनियाँ में सन्तों का भी अवतार है। नियम एक है। सिद्धान्त भी एक ही हैं। विष्णु के अवतार साधारणतया ब्रह्म के अवतार कहलाते हैं। सन्त सत्पुरुष के अवतार हैं जो अध्यात्म के भण्डार और स्रोत हैं। वह भी एक सूर्य है मगर सबसे बड़ा सूर्य है। योगियों ने उसे 'सत्यम्' कहा है जो गायत्री के प्राणायाम मन्त्र का अन्तिम इष्ट पद है।

ओ३म् भू, ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः
ओ३म् महः ओ३म् जनः ओ३म् तपः
ओ३म् सत्यम्

लेकिन इस मन्त्र के अर्थ में और राधास्वामी योग की शिक्षा में अन्तर है। यह सत्यम् नीचे के लोक का हैं। सन्तों सतनाम और सत पद इससे ऊंचा है। इसकी समझ उस समय

तक आना कठिन है जब तक अच्छी तरह अभ्यास के साथ सत्संग न किया जाय। यों समझाने को तो हम अपने शब्दों के सिलसिले में इसे बार-बार समझा भी चुके हैं। कोईरूहानी मण्डल ऐसा नहीं है जिसमें इन सातों स्थानों का प्रतिबिम्ब या आभास न हो। एक ही स्थानों में इन सातों लोकों की छाया रहती है।

इसी तरह दुनियाँ में सन्तों का प्राकट्य हुआ करता है। जब पृथ्वी अपने सूर्यमण्डल के साथ चक्कर खाती हुई सतपद वाले सूर्य के सम्मुख आती है सतनाम की धार को लिये हुए जो विचित्र व्यक्ति पैदा होता है उसी का नाम सन्त सत्गुरू है बशर्ते कि वह आध्यात्मिक शिक्षा का क्रम चालू करे अन्यथा वह सन्त तो अवश्य है किन्तु सत्गुरू नहीं है।

समय के सन्त सत्गुरू से यह अभिप्राय है वह हर समय नहीं रहते और अवतारों की तरह समय समय पर प्रकट होते हैं। बीच बीच में अवकाश भी पड़ता रहता है।

०:—०:

सरसठवाँ वचन

समय के सन्त सत्गुरुओं में से दो एक का संक्षिप्त संकेत

ऐसे समय के सन्त सत्गुरू एक परम सन्त कबीर साहब थे जो बनारस में पैदा हुये थे। वह मनुष्य क्या थे, मनुष्य के रूप में सचाई और अध्यात्मि (रूहानियत) की मूर्ति थे। जिस तरह उन्होंने दुनियां को चिताया, आपत्ति के समय सच्ची शान्ति का रास्ता दिखाया, वह छिपी हुई बात नहीं है लेकिन जातीय सामाजिक, धार्मिक और सामाजिक पक्षपात के कारण लोग उनकी शिक्षा के प्रति कम श्रद्धा रखते हैं अन्यथा उनकी

एक पुस्तक 'बीजक' को ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाय तो सूक्ष्म विचार की दृष्टि से वह धार्मिक पुस्तकों के पुस्तकालय में अद्वितीय ग्रन्थ कहलाने का अधिकारी है। इस एक पुस्तक में हर प्रकार के धार्मिक विचार पूरी व्याख्या के साथ आ गये हैं और उन्होंने अपने रूहानियत के भाव प्रकट किये हैं जिनका किसी आध्यात्मिक शिक्षक के कथन में नहीं है। हिन्दू किसी अंश तक इस बात को मानते भी हैं लेकिन बीजक का अध्ययन नहीं करते और अध्यात्मिक लाभ से बंचित रहते हैं।

मानस रामायण के चिरजीव आदरणीय अद्वितीय रचियता गोस्वामी तुलसीदास जी की साक्षी है :

सार वस्तु सब कबीर कहा।
शेष रहा सो सूर कहा॥
और कवियों ने फुटकल कहा।
तुलसी राम नाम पद गहा॥

यह पक्षपात और न्यायपूर्ण निर्णय है।

कबीर साहब के पश्चात पूर्ण धनी सत्पुरूष राधास्वामी का प्राकट्य हुआ जिन्होंने ५ ही वर्ष की आयु में अपने माता-पिता को सचाई (सत्मार्ग) की शिक्षा दी। उनके माता पिता नानक पंथी ओर परम गुरू नानक साहब के अनुयाई थे। उनको जप की असलियत समझाई और गुरू नानक साहब के बताये हुए मगर भूले हुए सुरत शब्द योग के साधन और अभ्यास का ढंग बताया। स्वामी जी की वाणी महा अनुभवी होती थी उसी समय एक महात्मा तुलसी साहब ने जो हाथरस में रहते थे और तब इनके घर आया करते थे इनकी माता के सामने यह भविष्यवाणी की थी कि—"माई ! तेरे घर यह बालक परम पुरूष का जहूर (प्राकट्य) हुआ है।" सत्पुरूष राधास्वामी साहब की शिक्षा का प्रचार दुनियाँ में हुजूर महा-

राज राय सालगराम साहब ने किया है जो उनकी रची हुई १८-१९ पुस्तकों में मौजूद है।

यह समय के सन्त सत्गुरू थे। जो बात कही है अकाट्य कही है और अगणित आदमियों को उनसे लाभ पहुचा है।

सन्त मत अब तक केवल शब्द और वाणियों के रूप में वर्णित किया जाता था। लोग शब्द गा लेते थे, वाणी पढ़ लेते थे लेकिन वास्तविक अर्थ से जानकारी नहीं होती थी। सन्तों के कथन को साधारण भजन समझते थे। अन्तरीय रहस्य पर पर्दा पड़ा हुआ था उसकी व्याख्या और स्पष्टीकरण का कहीं भी प्रबन्ध नहीं था। कबीरसाहब और नानक साहब के घराने के अनुयाई भी उनको ज्यों का त्यों नहीं समझते थे। और सुरत शब्द योग के साधन व अभ्यास से तो यह बिल्कुल ही अनभिज्ञ थे।

हुजूर महाराज ने दया करके सत्पद की शिक्षा स्पष्ट शब्दों में दी और सन्त मत के रहस्य को जन साधारण को खोलकर समझा दिया।

सन्तमत दुनियां का सर्वव्यापक मार्ग (आलमगीर तरीक) है मगर पंथाइयों ने अपनी अज्ञानता और अनसमझी से उसे साम्प्रदायिक सम्प्रदाय बना रक्खा था। सत्पुरूष राधास्वामी की दया से अब जाकर उसकी समझ हर एक को आने लगी हैं यह तो समय के सन्त सद्गुरू हैं जो जन्म से ही शिक्षा देते हैं। दूसरे वह भी ऐसे ही माने जाते हैं जिन्होंने अन्तरीय कमाई करके अध्यात्म की ऊँची श्रेणी प्राप्त कर ली है।

राधास्वामी साहब ने जीवों को कबीर साहब और नानक साहब और दूसरे महात्माओं की वाणियों का हवाला देकर अपनी ओर आकर्षित किया, जैसा कि सार वचन राधास्वामी में उल्लेख कराते है।

आपने एक जगह कहा हैं :—

संतन का मत सबसे ऊंचा। जो परखे सोई धर पहुंचा ।।
पहुचे की क्या करूँ बड़ाई। सब मत उसके नीचे आई ।।
जो मन में परतीत न देखे। तो कबीर गुरु वाणी पेखे ।।
तुलसीसाहिब का मत जोई। पलटू जग जीवन कहें सोई ।।
इन सन्तन का देऊं परमाना। इनकी वाणी साख बखाना ।।
जोग ज्ञान मत इन हूँ भाखा। पुनि संतन मत ऊंचा राखा ।।

यह वाणी साक्षी है कि सन्त मत के सिद्धान्तों में कहीं भी अन्तर नहीं है।

प्रत्येक पन्थ और सम्प्रदाय वाले को आदेश किया गया हैं कि जब जब समय के सन्त सत्गुरु प्रकट हों इनसे लाभ उठाना चाहिए। और पक्षपात को छोड़ देना चाहिए क्योंक ज्ञान की असली कमाई समय के सन्त सत्गुरु की संगत से प्राप्त होती है। कोई व्यक्ति यदि सामाजिक सम्प्रदाय के भ्रम में धोखा खा जाता है तो उसकी कमाई में त्रुटि रह जाती है। ज्यों का त्यों लाभ नहीं होता। और उपासना मार्ग का जो लाभ है वह उसे नहीं मिलता।

—×—

अड़सठवाँ वचन

छयासठवें वचन के प्रतिबिम्बत स्थानों का संकेत

छयासठवें वचन में संकेत रूप में प्रत्येक स्थान के अक्सों का एक-एक विशेष स्थान पर वर्णन किया गया है। उसके समर्थन में यहाँ सार वचन राधास्वामी गद्य का हवाला दिया गया है :—

"सबब इसका यह है कि मालिकेकुल ने अपनी कुदरत से हर एक स्थान को बतौर अक्स यानी छाया निजस्थान केलिएरचा है और

वक्त तुमको है मिला, दर्शन करो नित सतगुरु,
पा लो भक्ति ज्ञान शक्ति, निज धाम पाने के लिये ।।
कहता हूँ मैं बात सच्ची, माने न माने कोई,
काम मेरा बन गया है, विश्वास पाने के लिये ।
नन्दू को आनन्द मिला, अज्ञान सारा मिट गया,
बन्द होती है जुबाँ, निज धाम पाने के लिये ।।
राधास्वामी नाम लो, चरणों में गुरु के बैठ कर,
ज्ञान गुरु का रूप है, आनन्द पाने के लिये ।

वार्षिक निवेदिका राधास्वामी सत्संग हनमकुन्डा नवम संत सम्मेलन पर ठाकुर शंकरसिंह जी की ओर से

निराकार आकार सब, निर्गुण और गुणवन्त ।
है नाहीं सूँ रहित है, समझो यों भगवन्त ।।

ज्योति स्वरूपी आत्मा, घट-घट रहे समाय ।
परम तत्व मन भावना नेक न इत उत जाय ।।

गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी पूरन धनी हुजूर दातादयाल जी का वार्षिक उत्सब बसन्त पंचमी के शुभ अवसर पर मनाया गया और 'मनुष्य बनो' का झण्डा फहराया गया ।

दया दान और दीनता, दीना नाथ दयाल ।
हृदय शीतल दृश्य सम, निरखत करे निहाल ।।

हमारी प्रार्थना पर हुजूर परमदयाल जी महाराज होशियार तुर (पंजाब) से और दयाल हुजूर नन्दू भाई जी महाराज निजामाबाद(दक्षिण) से इस सन्त सम्मेलन के उत्सव में पधार

कर उन्होंने भय ताप से पीड़ित जीवों को उद्धार का मार्ग बतलाया ।

साध संग संसार में दुर्लभ मनुष्य शरीर,
सत्संगत से मिटत है, त्रिविध ताप की पीर ।।
सत सङ्गत में चाँदना, सकल अंधेरा और ।
सहजो दुर्लभ पाइये, सत सङ्गत में ठौर ।।

सहस्रों भ्रम वालों ने सत्संग से लाभ प्राप्त किया जिन्होंने श्रद्धा और हित चित से सुनकर विचार किया, सत्संग के यह वचन अवश्य ही उनके जीवन में परिवर्तन लायेंगे ।

साधु संग तीरथ बड़ा, ता में नीर विचार ।
सहजो नहीं ये पाइये, मुक्ति पदारथ चार ।।

वह पुरुष धन्य है और संसार में बड़े सौभाग्यशाली हैं जिनको सन्तों का सत्संग प्राप्त होता है ।

कबीर संगत साध का, साहब आवें याद ।
लेखे में वो ही घड़ी, बाकी के दिन बाद ।।

सत्सग स्वभाव और आचार और प्रकृति के सुधार का सबसे उत्तम उपाय है किन्तु बिना मालिक की अपार दया के सन्तों की शरण प्राप्त नहीं होती । "बिन हरि कृपा मिलहिं नहीं सन्ता ।"

जो आवे सत्संग में जाति वरन कुल खोय ।
सहजू मैल कुचैल जल, मिले सो गगा होय ।।

न यहाँ यम, नियम करने कीं आवश्यलता है और न शम, दम साधने की जरूरत है। जो नमक की खान में गया वही नमक हो गया ।

लाली अपने लाल की, जित देखूं तित लाल ।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल ।।

मालिक का निवास स्थान बैकुन्ठ अथवा स्वर्ग लोक नहीं है। वह सन्तों के हृदय में बसता है। इस कारण जो सन्तों का सत्संग करते हैं वे धन्य हैं।

मन मेरा पंछी भआ, उड़कर चला आकाश।
स्वर्ग लोक खाली पड़ा, साहिब सन्तन पास।

सन्ती के दर्शन का फल तत्काल, उसी क्षण मिलता है और मनुष्य के स्वभाव में परिवर्तन आने लगता है।

सहजो संगत संत की, काग हंस हो जाय।
तज के भक्ष अभक्ष को, मोती चुन-चुन खाय।।

सत्संग में काल और माया का प्रश्न नहीं रहता। मनुष्य सत्संग में जाकर अपने आपको भूला देता है। वहां का वातावरण तुमको आत्मिक रूप में सभ्य और सुशील बना देगा। केवल सावधान होकर चित्त से वचन सुनते रहो। तुमको मन इन्द्रियों के रोकने की शक्ति आती जायेगी।

कलि केवल संसार में, और न कोउ उपाय।
साध संग हरि नाम बिन, मन की तपन न जाय।।

गत वर्षों से सन्त सम्मेलन का शुभ उत्सव मनाने के कारण श्रोताजनों का हृदय सत्संग के मधुर वचनों से प्रफुल्लित हो गया। श्रृद्धा प्रेम और विश्वास में वृद्धि होकर अपने जीवन को सुधारने और आशा रहित बन आदर्श पर पहुंचकर जीवन मुक्त दशा प्राप्त करने का शुभ अवसर मिला।

जब लग चावल धान में, तब लग उपजे आप।
जग छिलके को तज निकस, मुक्ति रूप होई जाय।।

सत्संङ्गत में जाकर गुरु और साधु की सेवा करने से, मालिक के प्रेम की महिमा गाने से, मालिक का ध्यान करने से, मन, वचन व कर्म से शुद्ध हो जाओगे। फिर आप ही आप

विना किसी कठिन साधन से यम नियम वाले बनते जाओगे।

दया नाव हरि नाम की, सतगुरु खेवन हार।
साधु जन के संग में तरत न लागे बार ।।

इस सत्संग सम्मेलन में पंजाब, दहलां, अलीगढ़, गोरखपुर बलिया इटारसी, अमृतसर, अन्य दूर-दूर के स्थानों से सतसङ्गी सहोदर सम्मिलित होकर उत्सव की शोभा को बढ़ाया और सत्सग से लाभ प्राप्त किया। इनके प्रति सत्संग संस्था की ओर से हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की जाती है।

एक घड़ी का मोल ना दिन का कहा बखान।
सहजो ताहि न खोइये, बिना भजन भगवान ।।

यदि किसी मनुष्य को सन्त अथवा सतगुरु मिल भी जाये किन्तु जब तक वह सतगुरु के आदेश या आज्ञा का पालन नहीं करता आत्मिक उन्नति में सफल नहीं हो सकता।

सतगुरु मिले तो क्या भया, घट नहीं प्रेम परदीत।
अन्तर कोर न भीजई, ज्यों पत्थर जल भीत ।।

जिन सत्संगी भाईयों ने इस सन्त सम्मेलन में निष्काम सेवा करके हमारा हाथ बटाया है हम उनके भी आभारी हैं। सत्संग एक महान आत्मिक पाठशाला है जहाँ मनुष्य को क्रियात्मक पाठ पढ़ाये जाते हैं। उससे मन का गढ़न्त होती रहती है और वचन सुनने से श्रवण, मनन और निध्यासन होता रहता है।

वही एक ब्यापक सकल, ज्यों मनका में डोर।
थिर चर कीट पतंग में, दया न दूजा ओर ।।

परम आधार परम तत्व स्वरूप हजूर दातादयाल के चरन कमलों में हमारी करबद्ध यह प्रार्थना है कि सबका शुभ हो और सारे जगत का कल्याण हो।

R. S.

गाफिल शब्दावली से :—

शब्द

बूढ़ापा ज्यों ज्यों आता हैं, तृष्णा बढ़ती जाती हैं।
जिसम कमजोर होता है, वासना और सताती है ।१।

तजुर्बा मेरे जीवन का, यही मुझको बताता है।
जिसे निज नाम मिल जाता, तसल्ली उसको आती हैं ।२।

सुरत चढ़ती ऊपर, त्रिकुटी पार करती है।
गुरु मूरत नजर आती, नूरानी जो कहलाती है ।३।

महासुन्न के परे जाकर, सोहंग देश आता हैं।
वहाँ सत्पुरुष की लीला, यह धुन वीणा सुनाती है ।४।

हमारी वृत्ति ऐसी हैं, जो गिरती हैं सदा नीचे।
हमें यह मीठी लगती है, यही समझो फसाती है ।५।

हुये कैदी हैं हम ऐसे, छुड़ा सकते नहीं खुद को।
हमारी सुरत मन मिल कर, हमें इनमें लुभाती है ।६।

बताओ क्या तरीका है, जिसे अपना के बच जायें।
करे मेहर गुरु 'गाफिल', यही मेहर बचाती है ।७।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम		श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता		भारतीय
पता		शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ नव०, १९८८

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. NO L—ALG.28

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़—२०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या— 1925

श्रीमान Sri S. Vithal Rao Teacher
Z.P.P.H.S. Madnoor
Mandal Madnoor
जिला— Nizamabad. 503309

मुद्रक : श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।